अध्याय : 1

रघुवीर सहाय - जीवनवृत्त, व्यक्तित्व एवं कृतित्व

अध्याय : 1

रघुवीर सहाय - जीवनवृत्त, व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रस्तावना

छायावाद अपने अंतिम समय में कुंठाग्रस्त हो गया और उसमें एक गत्यावरोध उत्पन्न हो गया। इस स्थिति को साहित्यकारों ने पहचाना और नए आयाम-नए मूल्य विकसित हुए। एक नया मानवतावाद जन्मा। पहले तो इसका दृष्टिकोन उदार था, शोषितों का उद्धार था, इसके मूल में प्रगतिवादी दृष्टि थी और दलितों तथा शोषितों के प्रति सहानुभूति का भाव था। धीरे-धीरे स्वस्थ सामाजिक दृष्टि का विकास हुआ इसमें प्रमुख भूमिका निभायी उन कवियों ने जिन्हें हम भवानीप्रसाद मिश्र, हरिनारायन व्यास, धर्मवीर भारती, रघुवीर सहाय के नाम से जानते हैं।

यह वह कवि हैं ज्यों मजदूरों और पीडितों के मात्र हिमायती नहीं है, अपितु उनके दुःख-दर्द और प्रश्नों को बडी मुस्तेदी काव्यबद्ध करते रहे हैं। इन्होंने जनसामान्य और दलित वर्ग को सहानुभूति और करूणा के चश्मे से देखा। रघुवीर सहाय एक व्यक्ति नहीं, मात्र कवि नहीं, अपितु एक सशक्त विद्रोह का पर्याय है, जो सत्ता, व्यवस्था और पूँजीपतियों के प्रति व्यंग्य की धार लेकर प्रस्तुत हुआ है। जीवनभर संघर्षरत वृत्ति के कारण रघुवीर सहाय व्यंग्य की खरी चेतना के कवि के रूप में प्रसिद्ध रहें हैं।

प्रगतिशील चेतना का वाहक, मध्यवर्गीय चेतना के सरल बिम्बों का प्रस्तुतकर्ता, शोषित और उत्पीडितों की संघर्षी आत्मा का प्रतिरूपक रघुवीर अपनी काव्यानुभूति और काव्याभिव्यक्ति में पर्याप्त ईमानदार और जुझारू चेतना के कवि हैं। उनकी कविता जन-सामान्य के दुःख-दर्द और पीड़ा छटपटाहट की कविता है। नयी कविता के वैचारिक पक्ष को भावुकता और सजल स्निग्धता से समर्पित करके प्रभावी शिल्प ढालनेवाले कवियों में रघुवीर सहाय का नाम अनुपेक्षणीय है। उनका कवि

आज की बेहद पीसती हुयी संघर्षपूर्ण, कटु और कीचड़ में बिलबिलाती जिंदगी के ही सुंदरतम् अर्थ खोज पाने में समर्थ रहा है।

नयी कविता जिन कवियों के सतत प्रयास और स्वतंत्र चेता व्यक्तित्व की छाँह में पली, बढी और ऊँचाई तक पहुँची है उसमें रघुवीर सहाय का नाम प्रतिनिधि कवि के रूप में लिया जाता है। यह एक ऐसे कवि हैं जो किसी एक वाद गुट और धारा से नहीं बँधे हैं। वे तो सतत जागरूक और पिछली मान्यताओं को अस्वीकार करके आगे बढ़नेवाले कवि हैं। उनकी हर एक रचना अपनी सहजनिष्ठा, भविष्यधर्मी चेतना और रोमानियत को साथ लेकर ही यथार्थ बोध से जुड़ी है। एक ओर तो उनके काव्य में सूक्ष्म, प्रेमिल और माँसल अनूभूतियों का फैलाव है तो दूसरी ओर प्रगत्यन्मुखी चेतना का वह संस्पर्श भी है, जो प्रयोग की नित न्यी भूमिकाओं से होता हुआ नयी कविता तक फैलता गया है।

"दूसरा सप्तक" में जितनी कविता है उनके प्रयोग और संदेश पिछले कवियों से बहुत कुछ ठोस हैं। इस संकलन में भवानीप्रसाद मिश्र, शकुन्त माथुर, हरिनारायन व्यास, शमशेरबहादूर सिंह, नरेश मेहता, धर्मवीर भारती और रघुवीर सहाय की कुल 89 के लगभग कविताएँ संग्रहित हैं।

जीवन-वृत्त

रघुवीर सहायजी का जन्म 9 दिसम्बर, 1929 ई॰को (माडल हाउस मुहल्ला) लखनऊ में साहित्य के अध्यापक श्री॰हरदेवर सहाय के घर में हुआ। शहर में नौकरी करनेवाला विश्वविद्यालय शिक्षित परीवार जिसकी बैसवाड़े में छोटी-मोटी जमींदारी थी। पितामह श्री॰लक्ष्मी सहाय, पुलिस की नौकरी से सेवानिवृत्त होकर शेष जीवन आर्यसमाज के विचारों को फैलाने के साथ ही निःशुल्क चिकित्सा सेवा का कार्य भी करते रहे।

1931 में यक्ष्मा से माँ श्रीमती तारादेवी का देहान्त हुआ। माँ सीतापुर के तरीनपुर महल के रईस व जमींदार ठाकुर रामेश्वर बख्शसिंह की जेष्ठ पुत्री थी।

1936 में पहले दर्जे में दाखिला - "लखनऊ प्रीपरेटरी स्कूल" में।

1938 में "डबल प्रमोशन" से चौथे में दाखिला - "बाय एंग्लो बंगाली स्कूल" में, जहाँ पिता अध्यापक थे। इसी वर्ष पिता का दूसरा विवाह हुआ।

1939 में पिता की मृत्यु, जिनका कवि शिशु पर अत्याधिक स्नेह था। इसी वर्ष एक छोटे भाई का जन्म, परिवार में अकेले लड़के से दुकेले हुए।

1944 में मैट्रिक की परीक्षा पास की।

1946 में पहली कविता लिखी - "कामना"। इसी वर्ष इंटर किया। प्रसारण के माध्यम में शिल्पगत रूचि का आरंभ जो विविध रूपों में आज तक जारी है।

1947 में पहली बार कविता छपी - "आदिम संगीत", आजकल के अगस्त अंक में इलाहाबाद की "विश्ववाणी" और "संगम" में भी कविताएँ छपी।

1948 में पहली मुक्त छंद की कविता लिखी - "नया वर्ष" जो इसी वर्ष "कान्यकुब्ज कॉलेज" पत्रिका में छपी। अज्ञेय द्वारा संपादित द्वैमासिक प्रतीक (पावस अंक) में पहली बार लंबी कविता छपी - "सायंकाल"। प्रतीक के दो अंकों में और भी कविताएँ आई। इसी वर्ष बी·ए·किया।

1949 में लखनऊ विश्वविद्यालय के तत्कालीन उपकुलपति आचार्य नरेंद्रदेव ने कक्षा में उपस्थिति पूरी न होने के कारण अंग्रेजी एम·ए·प्रथम वर्ष की परीक्षा में बैठने की अनुमती नहीं दी। शमशेरजी और श्रीकृष्णदास के पास इलाहाबाद में आकर कुछ दिन रहे। "दूसरा सप्तक" के लिए अज्ञेय ने कविताएँ माँगी और इसी वर्ष उन्हें दे दी गयी।

1950 में लखनऊ लेखक संघ और नाट्य संघ के गठन में कृष्णनारायण कक्कड़ तथा नरेश मेहता के साथ शामिल हुए। यशपाल के नाटक "नशे-नशे की

वात" में यशपाल, कक्कड़ आदि के साथ अभिनय किया।

1951 में लखनऊ विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम·ए·करते ही मई 1951 से "प्रतीक" में सहायक संपादक होकर दिल्ली आ गए। इसी वर्ष "दूसरा सप्तक" में कविताएँ प्रकाशित हुई।

1952 अगस्त में "प्रतीक" बंद हो गया। "प्रतीक" बंद होने के बाद अगले साल अप्रैल तक दिल्ली में ही मुक्त लेखन करते रहे।

मई 1953 में आकाशवाणी के समाचार विभाग में उपसंपादक बने।

1955 में प्रो·महादेवप्रसाद श्रीवास्तव (अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग, बी·एस·एस·डी·कालेज कानपुर) की जेष्ठ पुत्री विमलेश्वरीजी से विवाह हुआ।

मार्च 1957 में आकाशवाणी से त्यागपत्र दे दिया। सितम्बर तक मुक्त लेखन करते रहे। मुक्त लेखन करते हुए लखनऊ से निकलने वाली पत्रिका "युगचेतना" के दिल्ली प्रतिनिधि रहे। "युगचेतना" के जून-जुलाई अंक में "हमारी-हिन्दी" कविता छपी। इस कविता को लेकर लखनऊ के सरकारी हिन्दी सलाहकारों में बावेला मचा। विद्यानिवास मिश्र उन दिनों सूचना विभाग में उपनिदेशक थे। उन्होंने पत्रिका की सरकारी खरीद की 400 प्रतियाँ खरीदने से बंद करा दी। शिवसिंह सरोज (स्वतंत्र भारत) ने इस पत्रिका का प्रतियाँ जलाने की धमकी दी। "सरस्वती" संपादक श्रीनारायण चतुर्वेदी ने कवि और कविता के विरूद्ध लेख लिखा। "कविता में हिंदी अगर दुहाजू की बीवी है तो यह दुहाजू कौन है ?" - विरोधियों के द्वारा यह प्रश्न पूछा जाने लगा। इस पूरे प्रसंग में यशपाल ने कवि का समर्थन किया। इसी वर्ष बद्रीविशाल पित्ती के निमंत्रण पर अक्तुबर में "कल्पना" के संपादक मंडल के सदस्य होकर हैदराबाद चले गए। मार्च में कानपुर में पहली संतान मंजरी का जन्म हुआ।

श्रीमती कमलादेवी चटोपाध्याय और कपिला वात्स्यायन ने फरवरी 1958 में सद्यःस्थापित एशिया थिएटर इन्स्टिट्यूट (नेशनल स्कूल आफ ड्रामा) में रिसर्च

आफिसर के रूप में विदेशी नाट्य विशेषज्ञों और देशी छात्रों के साथ काम करने के लिए दिल्ली बुला लिया। जून तक दिल्ली से ही "कल्पना" का काम देखते रहे। पिता की मृत्यु के कारण परिवार का दायित्व संभालने लखनऊ चले गये और अगले वर्ष मार्च तक वहीं रहे। दिसम्बर में वहीं दूसरी संतान हेमा का जन्म हुआ।

1959 में मार्च से दो अंकों में, अज्ञेय द्वारा संपादित अंग्रेजी त्रैमासिक वाक् में सहायक संपादक रहे। अगस्त से आकाशवाणी में संवाददाता के रूप में पहले एक साल का और तीन साल का अनुबंध मिला।

1960 में पहला संग्रह छपा - "सीढ़ियों पर धूप में" - जिसमें कविताएँ, कहानियाँ, निबंध आदि शामिल है। मार्च में तीसरी संतान गौरी का जन्म दिल्ली में हुआ। सुंदरलाल के नाम से 1960 से 1963 तक दिल्ली की डायरी नाम से "धर्मयुग" में एक पाक्षिक स्तंभ लिखते रहे। इसी वर्ष प्रायोगिक दूरदर्शन का उद्घाटन होने पर दूरदर्शन पर नियमित व्याख्यात्मक वार्ताओं का आरंभ करने के लिए चुने गए।

1961 मार्च में पुत्र वसंत का जन्म दिल्ली में हुआ।

1963 अगस्त में आकाशवाणी से अलग हुए तथा दैनिक "नवभारत टाइम्स" में विशेष संवाददाता बने।

1965 में भारत-पाक युद्ध के बाद भारत अधिकृत पाकिस्तानी गाँवों की यात्रा की। बाद में "सीमा के पार का आदमी" शीर्षक कहानी में इस यात्रा के अनुभवों का पुनःसृजन हुआ।

सितम्बर, 1967 में "आत्महत्या के विरूद्ध" का प्रकाशन। अक्तुबर में सिक्किम में नाथुला सीमान्त की यात्रा। इसी वर्ष कृषि पर्यवेक्षण के संदर्भ में आंध्र, उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश की यात्रा की। यात्रा में नागार्जुन सागर पर ही "अकाल" शीर्षक कविता लिखी।

1968 में "नवभारत टाइम्स" से स्थानांतरित होकर मार्च 1968 में समाचार संपादक के रूप में "दिनमान" में नियुक्त हुए। तत्कालीन संपादक सच्चिदानंद वात्स्यायन के विदेश चले जाने के कारण दिसम्बर 1968 में इस पत्र में स्थानापन्न संपादक हुए। दूरदर्शन में पहली बार अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं पर व्याख्या के साप्ताहिक कार्यक्रम की परिकल्पना दी और एक वर्ष तक उसकी प्रस्तुति की।

सच्चिदानंद वात्स्यायन के सितम्बर 1969 में विदेश से लौटकर त्यागपत्र देने पर "दिनमान" के कार्यकारी संपादक हो गए।

1970 में "दिनमान" के संपादक हुए। फरवरी में "सोवियत लेखक संघ" के निमंत्रण पर सोवियत संघ गए और एक महीना रहे। एव्तुशेंको और वोज्नेसेंस्की से परिचय हुआ और अलेक्सांद्र सेंकेविच जैसे युवा समीक्षकों से निकटता हुई। इसी वर्ष जर्मनी और इंग्लैंड की भी यात्रा की। जहाँ क्रमशः उपन्यासकार ऊवे जानसन तथा कवि एलेन जान ब्राउन से परिचय हुआ।

रघुवीर सहाय ने 1971 में बांग्लादेश में चल रहे संघर्ष के संदर्भ में अध्ययन के लिए त्रिपुरा में मुक्तिवाहिनी के प्रशिक्षण केंद्रों की यात्रा की। अगरतला में मुक्तिवाहिनी के सैनिकों से और मुजीबुर्रहमान के विश्वासपात्रों से संबंध बना था। दिसम्बर में मुक्ति के दस दिन बाद बांग्लादेश की यात्रा की। कवि जसीमुद्दीन, शमशुर्रहमान तथा अन्य लेखकों-बुद्धिजीवियों से निकट का परिचय हुआ।

1972 में पहला स्वतंत्र कहानी संग्रह "रास्ता इधर से है" प्रकाशित हुआ। मार्च में पुनः बांग्लादेश की यात्रा की। रघुवीर सहाय को पहली यात्रा की तुलना में इस बार वहाँ एक बिखराव नजर आया।

रघुवीर सहायजी को 1974 में "विश्व आर्थिक संबंध" नामक गोष्ठी में भारतीय पत्रकारों के प्रतिनिधि के रूप में चुना गया।

1975 में रघुवीर सहायजी के "हंसो हंसो जल्दी हंसो" काव्यसंग्रह का प्रकाशन हुआ। फासिज्म की पराजय की तीसवीं वर्षगांठ पर सोवियत संघ के सूचना

विभाग द्वारा निमंत्रित होने पर दूसरी बार सोवियत संघ की यात्रा की। इसी वर्ष नवम्बर में जर्मनी और हंगरी की यात्रा की। पूर्व जर्मनी के प्रसिद्ध कवियों-लेखकों से परिचय हुआ।

रघुवीर सहायजी ने 1976 में "दिल्ली मेरा परदेश" शीर्षक से 1960 से 1963 के बीच धर्मयुग में "दिल्ली की डायरी" के अंतर्गत लिखी गई रचनात्मक टिप्पणियों का संग्रह प्रकाशित किया।

1978 में रघुवीर सहायजी ने लिखा निबंधों का संग्रह "लिखने का कारण" प्रकाशित हुआ। तुर्की सरकार के निमंत्रण पर 10 दिन की तुर्की यात्रा की। इस्तांबूल और अंकारा में प्रवास किया।

1979 में रघुवीर सहायजी ने शेक्सपियर के नाटक "मैकबेथ" का "बरनमवन" शीर्षक से पद्यानुवाद किया। जो ब·व·कारंत के निर्देशन में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के रंगमंडल द्वारा खेला गया। इसी वर्ष यह अनुवाद प्रकाशित हुआ।

1980 में रघुवीर सहाय ने शेक्सपियर के "ट्वेल्वथ नाइट" का हिन्दी पद्य में तथा लोर्का का "हाउस आफ वर्नाडा एल्बा" का उर्दू गद्य में अनुवाद किया। यह नाटक इसी वर्ष स्टुडियों वन् द्वारा अमाल अल्लाना के निर्देशन में "बिरजीस कदर का कुनबा" के नाम से खेला गया।

अज्ञेय के शब्दों में - "रघुवीर सहाय को चुनी-चुनी फिल्में देखने का शोक है। तेज सवारियाँ पर बैठने और उन्हें खुद चलाने की तबीयत होती है। जीवन का कोई भी वृत्त सम्पूर्ण नहीं होता, पर यह कहे बिना तो नितान्त अपूर्ण रह जाता है कि कवि चार बच्चों का पिता है और उनके साथ बना रखना सींख रहा है।[1]

रघुवीर सहायजी का ग्राईस्थ जीवन सुखद है। आर्थिक स्थिति भी सामान्यतः ठीक है। रघुवीर सहायजी ने जाँति-पाँति के बंधनों का सदैव विरोध किया। रघुवीर

सहाय की दृष्टिपूर्ण तथा मानवतावादी है।

रघुवीर सहाय विनोदी प्रकृति के कवि हैं। संगीत के क्षेत्र में उन्हें विशेष रूचि है। इसके अतिरिक्त चुनी-चुनी फिल्में देखने का शौक है।

रघुवीर सहाय अत्याधिक सहृदय और संवेदनशील कवि हैं। गरीबों और शोषितों के प्रति उनमें गहरी सहानुभूति है। बच्चों के प्रति भी वे विशेष प्रेम रखते हैं। युवा-वर्ग निर्माण के प्रति भी वे सचेष्ट है। चारों ओर व्याप्त भ्रष्टाचार को देखकर कभी-कभी क्षुब्ध हो जाते हैं। रघुवीर सहाय जन-जीवन के कवि हैं।

व्यक्तित्व

रघुवीर सहाय के कविता में रोमानी प्रवृत्ति, भावुकता, गीतात्मक कारूण्य और ज्वलन भरी पीड़ा मौजूद है। स्पष्ट संवेदनाएँ, तीक्ष्ण व्यंग्य, निम्न-मध्यम वर्ग की स्थितियों तथा अनुभूतियों की अभिव्यक्ति, अकेलेपन की अनुभूति, असहायता और जीवन व्यर्थता का भाव, सरल संकेत, प्रतिकों का विधान, सहज कल्पना, रूपविधान में लोकस्पर्श की सहजता रघुवीर सहाय के काव्य की प्रवृत्तियाँ है। प्रश्नाकुलता और व्याकुलता युक्त तनाव भी उनकी रचनाओं में एवं व्यक्तित्व में लक्षित होता है।

अज्ञेय के कथनानुसार - "उनमें संदर्भ और सामाजिक चेतना की अपेक्षा अनुभव का प्राधान्य है और आंतरिक अनुशासन तटस्थता और तंत्र कौशल की कमी है। रघुवीर में मानव के आंतरिक परिवर्तन की आकांक्षा और मानवता तथा करूणा की भावना भी रही है। परंतु इधर इन मूल्यों के प्रति उन्हें शंका होने लगी है। यों व्यक्ति की आंतरिकता के साथ उससे सम्बन्ध बाहय लोकसत्ता पर रघुवीर की दृष्टि निरंतर बनी रही है।"[2]

रघुवीर सहाय प्रत्येक क्षेत्र में पारंपारिकता का विरोध करते हैं। वे सभी क्षेत्रों में प्रयोग के हिमायती हैं। उनकी कविता में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक ढाँचे में परिवर्तनों के लिए विद्रोह है।

रघुवीर सहाय निम्न-वर्ग के प्रतिनिधि कवि हैं। अतः उसे शब्दबद्ध करना उनके लिए सहज है। यही कारण है कि टूटन-घूटन, अस्तित्व की व्यर्थता, सामाजिक खोखलेपन और आत्मपीड़न की चेतना से भरी रघुवीर की कविताएँ ज़्यादा प्रभाव डालती है। कारण वे हमारी लगती है - आरोपित नहीं।

आम आदमी के दर्द, गहरी अनुभूति ने रघुवीर को आकुल-व्याकुल बनाया। साथ ही विघटित जीवन-मूल्य ने उनकी अकुलाहट तीव्रता भी दी। परंतु वे सीधे अपनी कविता को क्रांति की औकात नहीं दे पाए। फिर भी क्रांतिकारी सरजमीन तैयार करने के लिए उन्होंने अपनी कविता को व्यंग्य-विद्रोह का जामा पहनाया है -

"बरसों पानी को तरसाया
जीवन से लाचार किया
बरसों जनता की गंगा पर
तुमने अत्याचार किया।"[3]

रघुवीर सहाय की सबसे बड़ी उपलब्धि कवितागत सहजता और आत्मीयता है। यह ऐसी उपलब्धि है जो उन्हें अभिजात्य शिल्प के हिमायती अज्ञेय से अलग करती है। उन्होंने अनुभूत कथ्य को इन्हीं दो गुणों के कारण सहज सम्प्रेष्य बना दिया है। कहीं भी कोई लाग-लपेट नहीं है और न कहीं कोई मुखौटा ही। रघुवीर सहाय जिस सत्य, दर्द और सौंदर्य की कविता लिखते हैं वह साधारणीकृत होकर आसानी से गले भी उतर जाती है। किसी भी कवि के लिए यह बहुत बड़ी बात है। रघुवीर सहाय के प्रतीक और उपमान न तो घिसे-पिटे और मुलम्मा उतरे हुए है और न बिम्बवासी और बार-बार परिवर्तित।

"रघुवीर सहाय की परवर्ती कविता को यदि हम देखें तो उसमें संदर्भों की एक ऐसी तत्कालिकता है जिसमें समकालीन जगत के असंख्य ब्यौरे, अनेकानेक संदर्भ, सैंकड़ों व्यक्तियों और घटनाओं और इन सबके बीच बनते रिश्तों के संदर्भ, इस प्रकार सीधे-सीधे उपस्थित है जो इससे पहले कविता के लिए असंभव थे।

इन कविताओं में वेशुमार लोगों का आना जाना है।"[4]

वास्तव में रघुवीर सहाय "दूसरा सप्तक" के कवि हैं। जिन्होंने जन-जीवन में प्रयुक्त भाषा में लोकजीवन के सटीक एवं प्रभावक दृष्यों का अंकन किया है। भोगे हुए जीवन के यथार्थ एवं जीवित चित्र आपकी रचनाओं में मिलते हैं।

नयी कविता की फिहरस्त में रघुवीर सहाय एक ऐसे कवि हैं जिनकी "आत्महत्या के विरूद्ध" में छिन्न-भिन्न होती चली दुनिया का उदासिनता से वर्णन किया है। "लोग भूल गए हैं" में उन्होंने लोगों की नयी पहचान करा दी है। "हँसो हँसो जल्दी हँसो" में आनेवाले संकट की पहचान करा दी है। परिवेश के प्रति सजग प्रतिक्रिया जैसा रूप रघुवीर सहाय की "लढाई" में मिलता है। कवि के शब्दों में - "सबसे मुश्किल और सही एक ही रास्ता है कि मैं सब सेनाओं में लड़ूं - किसी में ढाल सहित, किसी में निष्कवच होकर मगर अंत में मरने सिर्फ अपने मोर्चे पर दूँ - अपने भाषा के शिल्प के, और उस दो-तरफा जिम्मेदारी के मोर्चे पर जिसे साहित्य कहते हैं।"[5]

रघुवीर सहाय की कविता में सरसता, कोमलता एवं संगीतात्मकता सहज गेयता का प्राधान्य है। उनकी कविता प्रठायपरक अनुभूतियों से शुरू होती है, इसलिए आरंभ में प्रकृति चित्रण का उद्दीपण चित्र, रूमानी प्रवृत्ति से समन्वय भावुकता, गीतात्मक करूणा तथा प्रेम-संकुल पीड़ा का उसमें प्राधान्य है।

रघुवीर सहाय उन कवियों में हैं जिन्हें वर्तमान युग के मानव संकट का बहुत स्पष्ट आभास है। मानव चक्रव्यूह में घिरकर कुंठित हो रहा है। यह सब बातें कवि भूल जाना चाहता है परन्तु वह भूल नहीं सकता। कवि ने इस छटपटाहट को इस तरह व्यक्त किया है -

"यह अभागा प्यार ही यदि है भुलाना,
तो विरह के वह कठिन क्षण भूल जाना
हाय जिनका भूलना मुझे मना है।"[6]

रघुवीर सहाय नए कविता के महत्वपूर्ण कवि हैं। वे मानव स्वतंत्रता की कृत्रिम स्थिति के प्रति सचेत करते हुए मानव-विवेक को जागृत करने की आवश्यकता प्रतिपादित करते हैं किन्तु मानव की वैयक्तिक स्थिति भी उन्हें स्वीकार नहीं है। वे सामूहिकता के विरोधी हैं किन्तु विवेकयुक्त सामाजिकता के समर्थक। यदि सामाजिकता का अर्थ अंधानुकरण है तो वह उनकी दृष्टि में प्रगति न होकर पिछलग्गुपन है जो मानव विवेक को कुंठित करता है।

रघुवीर सहाय का कृतित्व

काव्य-ग्रन्थों का काल-क्रमानुसार परिचय -

रघुवीर सहाय "दूसरा सप्तक" के एक सशक्त हस्ताक्षर हैं। कवि रूप में रघुवीर को अज्ञेयजी ने "दूसरा सप्तक" 1951 ई॰में स्थान दिया और तब से उनकी चर्चा नए कवियों में होने लगी। इसके बाद रघुवीर सहाय के कविता संग्रहों के प्रकाशन का क्रम शुरू हुआ। रघुवीर सहाय ने अपनी कृतियों द्वारा हिन्दी साहित्य को समृद्ध और सशक्त किया है। आपकी बहुमुखी प्रतिभा से नए कविता को विशेष बल मिला है और कविता के क्षेत्र में अनेक नये प्रयोग कर काव्य के भावपक्ष को अधिक ही सामर्थ्यवान बनाया है। आपकी रचनाओं में नवीन ताज़गी और बाँकापन मिलता है।

रघुवीर सहाय के कृतित्व में सामाजिक वैषम्य की पीड़ा, अत्याचार, शोषण, विषमता, अनुभूति, रूप, रस, अर्थसौंदर्य क्षमता, आधुनिक शहरी संवेदना, सांस्कृतिक दृष्टि और शिल्प का नया रूप है। विज्ञान चेतना भी उनके काव्य में कहीं-कहीं दिखायी देती है।

व्यक्ति और उसके सामाजिक परिवेश को जानने पहचानने का दृष्टिकोन रघुवीर सहाय का वैज्ञानिक है, फिर भी वे अपने को प्रगतिवादी खेमें में नहीं खड़ा करना चाहते हैं। संभव है मुखौटों के प्रति प्रतिबद्धता पसन्द न हो। जो भी हो, बौद्धिक धरातल पर उन्हें प्रगतिशील तो कहा ही जाएगा। उनका कथन है - "कोशिश

तो यही रही है कि सामाजिक यथार्थ के प्रति अधिक से अधिक जागरूक रहा जाय और वैज्ञानिक तरीके से समाज को समझा जाये।...मगर मार्क्सवाद को कविता पर गिलाफ की तरह चढ़ाया नहीं जा सकता है। उसके लिए मध्यमवर्गीय, धोखा खाते रहनेवाले ढुलमुल यकीन को, अपनी बौद्धिक चेतना को जागरूक रखना पडेगा और बराबर जागरूक रहकर एक दृष्टिकोन बनाना होगा।"[7]

कवि रूप में रघुवीर सहायजी को अज्ञेयजी ने "दूसरा सप्तक" 1951 ई.में स्थान दिया और तबसे उनकी चर्चा नए कवियों में होने लगी। इसके बाद रघुवीर सहाय के कविता संग्रहों के प्रकाशन का क्रम शुरू हुआ। इनके कविता संग्रह निम्नलिखित हैं -

1. सीढ़ियो पर धूप में - 1960
2. आत्महत्या के विरूद्ध - 1967
3. हँसो हँसो जल्दी हँसो - 1975
4. लोग भूल गए हैं - 1982

रघुवीर सहाय ने कविताओं के साथ-साथ कहानियाँ भी लिखी हैं। रघुवीरजी के दो कहानी संग्रह प्रकाशित हैं -

1. सीढ़ियों पर धूप में - 1960
2. रास्ता इधर से है - 1972

इसके साथ रघुवीर सहायजी ने कुछ निबंध भी लिखे हैं। वे इसप्रकार हैं -

1. सीढ़ियों पर धूप में - 1960
2. दिल्ली मेरा परदेश - 1976
3. लिखने का कारण - 1978

इसके अलावा "बारह हंगरी कहानियां", विवेकानंद (रोमां रोला), "जेको" (युगोस्लावी उपन्यास, ले.इवो आंद्रिच), "राख और हीरे" (पोलिश उपन्यास, ले.येर्जी

आन्द्रजेयेव्स्की§ तथा "वरनम वन" §मैकबेथ, शेक्सपियर§ शीर्षक से हिन्दी भाषांतर भी समय-समय पर प्रकाशित हुए हैं।

रघुवीर सहाय असाधारण प्रतिभा के साहित्यकार हैं। उन्होंने साहित्य की प्रायः प्रमुख विधानों पर लेखनी चलायी और अच्छी सफलता प्राप्त की। उनका साहित्य मध्यमवर्गीय चेतना से अनुप्रणित है। वे साहित्य के किसी आंदोलन से प्रतिबद्ध नहीं रहे। उन्होंने स्वच्छंद रूप से मानवीय प्रतिबद्धता के साथ साहित्य सृजन किया।

सीढ़ियों पर धूप में

इस रचना में कवि ने निर्वासन, अकेलापन, अलगाव, पूरानी पीढ़ी के प्रति आक्रोश के स्वरों को अपनाकर नहीं चले हैं, बल्कि अनाहत जिजीविषा, मध्यमवर्गीय जीवन का दबाव तथा लोकतंत्र के जीवन की विडम्बनाओं की विवृत्ति उनके काव्य का विशिष्ट अंग बन गई है। इस तथ्य की पुष्टि उनके इस कविता संग्रह में सहज ही होती है। जैसे -

"दुखी मन में उतर आती है पिता की छवि
अभी तक जिन्हें कष्टों से नहीं निष्कृति
उन्हीं अपने पिता की मैं अनुकृति हूँ
यही मैं हूँ।"[8]

× × ×

"तुमने जो दी है अनाहत जिजीविषा
उसे क्या करें ?
कहो, अपने पुत्रों मेरे छोटे भाइयों के लिए
यही कहो।"[9]

कवि की उक्त रचना से स्पष्ट है कि सपाट बयानी में बसी हुई विकृति को पसन्द नहीं करता है, इसीलिए उसने अपने पिता को कोसा नहीं है बल्कि

यथार्थ रूप से उनसे जो जिजीविषा प्राप्त हुई है, उसे अपने छोटे भाइयों तक कवि वितरित करके और भी विशद बनाना चाहता है। कवि की प्रत्येक कविता में यही सादगी है, और इस सादगी के पीछे आधुनिकता की सीमाओं को पार कर जाने की वास्तविक जिजीविषा विद्यमान है। प्रस्तुत पंक्तियाँ दर्शनीय हैं, जिनमें सहयोग और सहृदयता का एक विशिष्ट रूप विद्यमान है -

"बन्धु हम दोनों थके हैं
और थकते ही रहें तो साथ चलते भी रहेंगे
वह नहीं है साथ जिसमें तुम थको तो हम
तुम्हें लादे फिरें
औ हम थकें तो दम तुम्हारा फूल जाये-हाय।"[10]

इस संग्रह की अधिकांश रचनाओं में ऐसे व्यंग्य उभर कर आये हैं जो कुछ रूँधे हुए प्रतीत होते हैं, जैसे - "हमने यह देखा", "दुनिया", "पढिए गीता" "नारी" इत्यादि कविताओं को लिया जा सकता है। किन्तु इन रचनाओं में किसी निश्चित स्थिति का संकेत प्राप्त नहीं होता। इस संग्रह की कविताएँ इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है कि वे आधुनिकता के इस युग में पहली बार एक उदार मुक्त संवेदना का - खुलेपन का "संसार" रचती हुई दिखाई देती है। विश्व के अनेक सुखात्मक और मार्मिक पहलू इन कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत हुए हैं।

इस संग्रह में समसामयिकता का आग्रह नई कविता में जगह जगह परिलक्षित होता है। यह समसामायिकता ही नए कवि को क्षण के प्रति आग्रही बनाती है क्योंकि नया कवि लघु परिवेश के संदर्भ में लघुमानव को परिभाषित करना चाहता है, उसकी संवेदना को आत्यंतिक रूप से पकड़ना चाहता है अतः उस परिवेश के अंतर्गत आत्मसाक्षात्कार का एक-एक क्षण महत्वपूर्ण है। रघुवीर सहाय आरंभ की कविता में कहते हैं -

"माथे मुकुट व्यथा का बाँधे
इस क्षण की महिमा से मंडित।"

और अंत में उनका कहना है -

"हे प्रिये, हे जीवित पल
क्षण जी लें तब आगामी क्षण तक पहुंचा दें।"[11]

क्षण की इस महत्ता से इन्कार नहीं किया जा सकता क्योंकि किसी चीज को महसूस करने की शुरूआत ही होती है क्षण की सापेक्षता में। लेकिन "नई कविता" में यह "क्षण" क्षणवाद का रूप ग्रहण कर गया है और कहना चाहिए कि अतीत और भविष्य की असंबद्धता में वह पलायन से जुड़ गया है। रघुवीर सहाय के यहाँ यह "क्षण" अतीत और भविष्य से असंबद्ध नहीं है बल्कि इसके बारे में उनकी स्पष्ट स्वीकृति है कि "इन क्षणों को एक परंपरा में रखना होता है और इस स्तर पर जो परंपरा आगे बढ सकती है, वह कला की ही अपनी सौंदर्यबोध की परंपरा है।

इस संग्रह में प्रबंध या लंबी कविता का विधान नहीं है। पर उनकी छोटी कविताओं में ही जीवन का इतना विस्तार और वैविध्य है कि महाकाव्य के लिए गिनाए गए वर्ण्य विषयों की लंबी सूची और उसकी सार्थकता अनायास याद हो आता है। मनुष्य और मनुष्य, मनुष्य और प्रकृति, प्रविधि तथा राजनीति की अनेकस्तरीय टकराहटों को सजग ढंग से कवि अंगीकार करता है और यो "सारा का सारा जीवन" अनेक भंगिमाओं में वहाँ उजागर होता चलता है। कवि की आरंभिक कविताओं में है - "मेरा एक जीवन है।" प्रायः 30 पंक्तियों की इस छोटी कविता में जीवन के अनुभवों का संश्लेष संभव हुआ है -

"मेरा एक जीवन है
उसमें मेरे प्रिय हैं, मेरे हितैषी हैं, मेरे गुरूजन हैं
उसमें मेरा कोई अन्यतम भी है :
पर मेरा एक और जीवन है
जिसमें मैं अकेला हूँ
जिस नगर के गलियारों फुटपाथों मैदानों में घूमा हूँ

हँसा खेला हूँ
उसके अनेक हैं नागर, सेठ, म्युनिसिपल, कमिश्नर, नेता
और सैलानी, शतरंजबाज और आवारे
पर मैं इस हाहाहूती नगरी में अकेला हूँ।"[12]

इस हाहाहुती नगरी में अकेला हूँ, पंक्ति जैसे जीवन को संपूर्णतः रूपायित करती है, उसकी भीड़ और सन्नाटे दोनों को। यह वह परिवेश है जहाँ कवि जीता है, और जीवन प्रक्रिया कैसी है -

"सारे संसार में फैल जाएगा एक दिन मेरा संसार
सभी मुझे करेंगे दो-चार को छोड - कभी न कभी प्यार
मेरे सृजन, कर्म-कर्तव्य, मेरे आश्वासन, मेरी स्थापनाएँ
और मेरे उपार्जन, दान-व्यय, मेरे उधार
एक दिन मेरे जीवन को छा लेंगे - ये मेरे महत्व।
डूब जायेगा तंत्रीनाद, कवित्त-रस में, राग में, रंग में,
मेरा यह ममत्व
जिससे मैं जीवित हूँ।
मुझ परितृप्त को तब आकर वरेगी मृत्यु मैं प्रतिकृत हूं।"[13]

जीवन के प्रति यह कृतज्ञता और सार्थकता का बुनियादी भाव रघुवीर सहाय के कृतित्व में अंतर्धारा की तरह व्याप्त है, जो खीज, उब, निराशा के बीच सूखता नहीं। ऊब, आतंक और मृत्युभय के इस आधुनिक संसार में कवि ने यह भावात्मक सुरक्षा सामान्य साधारण जीवन से पाई है। इस दृष्टि से बोलचाल की भाषा रघुवीर सहाय के लिए शिल्प या मुद्रा नहीं है, उनकी निष्ठा का आधार है। यह मध्यवर्ग और बोलचाल ही जीवन का वह अनंत प्रवाह है, जो मनुष्य की महिमा, करूणा और विद्रूप सबको साधे है, और जो मनुष्य जीवन का बड़ा हिस्सा है। रघुवीर सहाय के काव्य में तोष, उल्लास और शरारत की मनःस्थितियों का स्त्रोत यही है, यद्यपि आगे चलकर खीज, चिडचिडाहट या कि बेचैनी की मनःस्थिति

बढ़ जाती है। अपने व्यक्तिगत जीवन को लेकर कवि जितना प्रसन्न् है, अपने देश और काल में वह उतना ही दुखी है। यह अंतर्विरोध फिर विलीन हो जाता है रचनाकार व्यक्तित्व की समग्रता में।

इस रचनाकार व्यक्तित्व के निर्माण में प्रकृति का गुणात्मक योगदान है। जिस दुनिया में घर, नगर, संसद सब शामिल है - कवि व्यक्तित्व को प्रकृति साधती है। यह स्मरणीय है कि प्रकृति कवि के लिए शरणस्थली नहीं है, वह मनुष्य की सहभागी है। इस दृष्टि से आलंबन उद्दीपन से उपर उठकर वह मनुष्य और यंत्र को एक दूसरे से जोड़ने वाली शक्ति है। मनुष्य पर मनुष्य और यंत्र का दबाव जितना अधिक है जीवन में प्रकृति का एहसास उतना ही तीव्र है। रघुवीर सहाय की प्रकृति संबंधी कविताएँ यों अपने में संपूर्ण अनुभव है। इस संदर्भ में एक कविता "पानी के संस्मरण" - छोटी होने के कारण पूरी - उद्धृत की जा सकती है -

"कौंध : दूर घोर वन में मूसलधार वृष्टि
दुपहर : घनाताल : उपर झुकी आम की डाल
बयार : खिडकी पड खड़े, आ गई फुहार
रात : उजली रेती की पार; सहसा दिखी
शांत नदी गहरी
मन में पानी के अनेक संस्मरण हैं।"[14]

इन छोटी-छोटी पंक्तियों में पानी की याद जैसे एक जीवन क्रम को उपस्थित कर देती है। एक तरह से पानी के ये रूप जीवन के वैविध्य को ही अंकित करते हैं। और अपने संक्षिप्त चित्रांकन में भी अनुभव की गहरी तहें खोलते हैं। ऋतुचक्र और तद्नुसार बदलते परिदृश्य को यहाँ गतिशील जीवन के बिंव रूप में प्रस्तुत किया गया है और यह बिंबमाला अपने आप में प्रकृति का दृष्यांकन है। इस तरह दृश्य और बिंब का आंतरिक संपर्क इस संक्षिप्त से प्रकृति चित्र में जीवन की अनंत संभावनाएँ खोल देता है, "पानी के संस्मरण" और जीवन के संस्मरण

एकाकार हो जाते हैं। कविता में जैसे चित्र का तीसरा आयाम अनंत कर दिया गया हो और फिर काल के आयाम में समूचा अंकन गतिशील हो उठा है। वस्तुतः यही तो जीवन की भी रचना है।

प्रकृति और जीवन की संश्लिष्ट संरचना रघुवीर सहाय के काव्यविधान का स्वभाव है। यह संश्लिष्टता कवि के लिए कैसी अनायास है इसे एक अन्य छोटी-सी कविता से समझा जा सकता है। जीवन कैसे फिर-फिर प्रकृति में शुरू होता है और रचना का क्षण कैसे बार बार जीवन में अवतरित होता है, यह इस कविता की मूल भावभूमि है, जिसमें से जिजीविषा और रचना का अद्वैत उभरता है -

"आज फिर शुरू हुआ जीवन
आज मैंने एक छोटी सी सरल सी कविता पढ़ी
आज मैंने सूरज को डूबते देर तक देखा
जी भर आज मैंने शीतल जल से स्नान किया
आज एक छोटी सी बच्ची आई, किलक मेरे कंधे चढी
आज मैंने आदि से अंत तक एक पूरा गान किया
आज फिर जीवन शुरू हुआ।"[15]

"सीढ़ियों पर धूप" संग्रह में कवि रघुवीर सहाय की रचना का एक विशेष तेवर भी दिखाई पड़ता है। इनकी विशेषता है - अनेक असंबंद्व वस्तुओं को रचना में एक स्थान पर ला खड़ा करना। उनके संदर्भ में रचना द्वारा एक नया अर्थ संप्रेषित करने का प्रयास कवि ने किया है -

"बिल्ली रास्ता काट जाया करती है
प्यारी प्यारी औरतें हरदम बकबक करती रहती हैं
चाँदनी रात को मैदान में खुले मवेशी
आकर चरते रहते हैं।"[16]

प्रत्येक पंक्ति अपने आप में एक अलग इकाई हैं। सबका अपना स्वतंत्र अर्थ है। सभी अपनी बात तीव्र और सटीक तरीके से कहती हैं। उपरी असंबद्धता आंतरिक अर्थ-गर्भ के कारण व्यंग्य के तीव्र शर के रूप में दिखाई पड़ने लगती है। इस तरह असंबद्धता एक सन्तुलन के साथ सम्बन्ध-सी प्रतीत होने लगती है। विसंगति विड़म्बना, तनाव, व्यंग्य को प्रस्तुत करनेवाली कवि की अनेकों रचनाएँ इस संग्रह में मिलती है। रघुवीर सहाय का यही आत्म-साक्षात्कार है। भावुकता से उनका नाता जुड़ता नहीं। अतीत-भविष्य के मोह के प्रति भी सतर्क रहते हैं। वर्तमान के प्रति अनन्य आस्था तो है, पर उसे भी जान-पहचान कर ही कवि कविता की सामग्री बनाता है। भाषा प्रायः सहज बोलचाल की है। अन्दाज सपाट-बयानी का है किन्तु व्यंग्यों की मुखरता के कारण अभिव्यक्ति को न-ही सपाट कहा जा सकता है और न-ही सतही।

आत्महत्या के विरूद्ध

"आत्महत्या के विरूद्ध" रघुवीर सहाय का दूसरा काव्य संग्रह है। इस संग्रह की रचनाओं के अंतर्गत कवि ने दुनिया के मानो अनेक बहुरूपी पहलुओं से संपर्क बढाया है। इन संपर्कों के कारण जो ज्योति प्रज्ज्वलित हुई उससे कवि के मन पर कुछ नए संस्कारों की छाप पड़ी है, जिनका समन्वित रूप इस संग्रह की कविताओं में स्पष्ट दिखायी देता है। वैसे भी "आत्महत्या के विरूद्ध" में कवि प्रतिपक्ष में शामिल होता हुआ मानो आत्महत्या के पक्ष में चला जाता है। इस सम्बन्ध में कवि ने इस संग्रह की भूमिका में लिखा है - "पहले हम उस दुनिया को देखें, जिसमें हमें पहले से जादा रहना पड़ रहा है, लेकिन जिससे हम न लगाव पा रहे हैं, न अलगाव। लोकतंत्र-मोटे, बहुत मोटे तौर पर लोकतंत्र-ने हमें इन्सान की शानदार जिन्दगी और कुत्ते की मौत के बीच चाँप लिया है।" इससे स्पष्ट हो जाता है कि कवि का पक्ष "आत्महत्या के विरूद्ध" संग्रह में लोकतंत्र का प्रतिपक्ष है।

आज के युग में लोकतंत्र के भ्रष्टाचार से लगभग सभी लोग परिचित हैं, उस भ्रष्टाचार के प्रतिनिधि के रूप में कवि ने कल्पित पात्र मुसद्दीलाल को मंत्री के रूप में ग्रहण किया है। इस संपूर्ण संग्रह में ही मुसद्दीलाल छाये हुए हैं। ऐसे निक्कमे मंत्रियों के प्रतीक मुसद्दीलाल की छाया में लोकतंत्र का ठीक तरह से चलना असंभव है। ऐसे ही भ्रष्ट मंत्रियों ने नेहरू-युग के औजारों में पेंच-भरी चूडियों का अविष्कार किया। इस युग में कोई बीमार इसलिए पड़ता है कि उसने मुसद्दीलाल को प्रसन्न नहीं किया। इसी कारण कवि कह उठा है -

"दर्द, खैराती अस्पताल में डाक्टर ने कहा वह मेरा काम नहीं
वह मुसद्दी का है
वही भेजता है मुझे लिखकर इसे अच्छा करो
जो तुम बीमार हो तुमने उसे खुश नहीं किया होगा
अब तुम बीमार हो तो उसे खुश करो
कुछ करो।"[17]

रघुवीर सहाय की कविताएँ सन 1960 के आसपास और उसके बाद के वातावरण की सजीव अभिव्यक्ति है। कवि ने सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, स्थितियों का आधार लेकर आज के व्यक्ति को जो "पिंजडे में कैद सुग्गे" की हालत में है और जहाँ देश की व्यवस्था का विराट वैभव व्याप्त है चारों ओर एक कोने में दुबक ही तो सकता है।" उसकी स्थिति को अपनी कविताओं में उतारा है। कवि कहता है -

"बीस वर्ष
खो गये भरमें उपदेश में
एक पूरी पीढ़ी जनमी पली पुसी क्लेश में
बेमानी हो गई अपने ही देश में।"[18]

कवि रघुवीर सहाय ने समाज और देश ही नहीं पूरे युग की आत्मा को पहचाना है। इन बीस वर्षो में देश में फैले ढोंग, आडम्बर, कपट, झूठ, स्वार्थलिप्सा और भ्रष्टाचार के कारण व्यक्ति, समाज और शासन के आपसी सम्बन्ध टूट गए हैं। सामाजिक जीवन का आत्मविश्वास जाता रहा। हमारी आशाओं को आघात पहुँचा। अनास्था और अस्वीकृति का उदय हुआ। देश की इस सच्ची स्थिति के बीच कवि "हमें घुमाता हुआ ले चलता है"। हाँ-हाँ करता हुआ, हे-हे करता हुआ दल का दल, महासंघ का मोटा अध्यक्ष, तोंददानी गोंददानी नेता, मंच पर आदर्श बघारने वाले मंत्री और नेता सभी को दर्शाता हुआ तथा उनकी यथास्थिति स्पष्ट करते हुए कवि कहता है -

"बाँध में दरार
पाखंड वक्तव्य में
मिलावट दवाई में
नीति में टोटका
अहंकार भाषण में
आचरण में खोट हर हफ्ते मैंने विरोध किया
सचमुच स्वाधीन हो जाने का इतना भय
एक दास जाति में।"[19]

इस संग्रह की कविताएँ एक बुद्धिजीवी जागृत कवि का अपने देश की जनता के साथ सही "सम्बन्ध" व्यक्त करती है जिससे उसे "नफरत है। सच्ची और निस्संग" पर भी "जिन पर" उसका क्रोध बार-बार न्योछावर होता है क्योंकि इनकी बेबसी को कवि जानता है। उसे इस भीड़ की "गंध और रंग" तक की पहचान है। सामान्य व्यक्ति जिसकी "लालसा तिलतिल कर मिट गई", जो बेजुबान हो तकलीफ उठाता है। उसका गहरा अहसास कवि को है -

"एक शब्द कहीं नहीं कि वह लड़का कौन था
क्या उसके बहनें थीं
क्या उसने रक्खे थे टीन के बक्से में अपने अजूबे

वह कौन कौन से पकवान खाता था
एक शब्द कहीं नहीं वह एक शब्द जो वह खोज
रहा था जब वह मारा गया।"[20]

कवि की इन सबके प्रति व्यक्तिगत करुणा और सहज आत्मीयता उस यथार्थ अनुभव के निजी साक्षात्कार के कारण है जो कविताओं को इतनी सक्षम व प्रभावशाली बना देती हैं।

"आत्महत्या के विरूद्ध" संग्रह की छोटी कविताओं में "हरी गहरी रात", "खडी स्त्री", "प्रार्थना घर", "चढती स्त्री" आदि में रघुवीर सहाय का कवि उभरा है। ये कविताएँ मानवीय करूणा से भीगी है। वैयक्तिक कविताओं में अनुभूति की सघनता का अभाव है।

कुछ कविताओं "अकाल", "नयी हँसी", "अधिनायक" आदि में बडा पैना व्यंग्य है। रघुवीर सहाय कहीं-कहीं इसी कारण गंभीर रचना में "शरारतें" या गैर जिम्मेदारना हरकतें भी करते हैं। जिससे व्यंग्य और तीखा हो जाता है। विसंगति के संगीत और निरर्थकता में अर्थ दिखाई पडने लगता है। कवि की यह विशेषता अद्भूत है। "लोगों को उनकी तोंद से जानता हूँ", "जीवनदानी गोंददानी" आदि प्रयोग सार्थक और व्यंजना गर्भित है। इस प्रकार मेरे शब्द एक लहरियाता दो गाना बनकर उकडू बैठे लोगों पर मिनमिनाने लगे। यहाँ "मिनमिनाने" का प्रयोग वर्तमान समाज के "बासीपन खालीपन और दैन्य जड़ता" को उभार देता है। इस प्रकार कवि ने व्यंजना का सार्थक प्रयोग किया है।

कवि की भाषा और शिल्प भी प्रौढ हैं। भाषा को कवि ने हर कोने, हर परिवेश से लिया है। आम बोलचाल की भाषा का इतना सक्षम, सार्थक और प्रभावशाली प्रयोग कवि की विशेषता है। "कुकुँआते, पिंपयाता, दो हत्थड़" आदि निराला की परम्परा के प्रयोगों के अतिरिक्त कवि ने जीवन सच्चाइयों की खोज करनेवाले कुछ नए शब्दप्रयोग भी किए हैं। यह प्रयोग किसी विशेष भावदशा से सम्बन्धित है। जो स्थिति को अधिक सजीव रूप से स्पष्ट करते हैं। कवि कहता है -

"वापस ले जाओ मुझे एक बार उस दिन
जब मैंने कहा था कि भाषा को
मंदिर में बन्द मत करो
उसे बोलो।"[21]

"आत्महत्या के विरूद्ध" में रघुवीर सहायजी ने शिल्प शैली के कई स्तर पार किए हैं। पूर्व की भाँति आज भी स्थापत्य सरल और सूक्ष्म है। "गिरीश की मृत्यु" और "फिल्म के बाद चीख" कविताओं में समक्षीकरण द्वारा चरम प्रभाव की सृष्टि की गई है। तुकाग्रह कविता को बेहद सपाट और भद्दा बनाता है। और कोई माने अथवा न माने, यह कविता का फूहड़पन है। कुछ पंक्तियों से कवि अपनी रचना को असरदार बनाना चाहते हैं, विपरीत उसके वे पंक्तियाँ कविता के असर को तोड़ती हैं - "लोग लोग मार तमाम लोग" प्रस्तुत काव्य-संग्रह आत्महत्या के विरूद्ध स्वर प्रकट करती हैं।

हँसो हँसो जल्दी हँसो

इस संग्रह में रघुवीर सहाय का नैराश्य नहीं बल्कि हथेली पर सूरज उगाने की कामना है और अंधकार से उबड़ने का अदम्य उत्साह भी। इस रचना में सम-सामयिक चेतना की दृष्टि से सामान्य मानव की व्यथा एवं दयनीय स्थिति, शासन तंत्र की व्यवस्था के कारण नेताओं में बढ़ते भ्रष्टाचार, अविश्वास, पराजय, अनिश्चितता का बोध सर्वत्र दृष्टिगत होता है। इसमें कवि यथार्थ की धरती पर निर्भय चलता हुआ दिखाई देता है जिसमें युगीन विसंगतियाँ सहज ही चित्रित होती हुई चली जाती है।

"हँसो हँसो जल्दी हँसो" की इन पंक्तियों में रघुवीर सहाय ने न सिर्फ हिन्दी को लेकर बरती जानेवाली शर्मनाक रस्म अदायगी का पर्दाफाश किया है, बल्कि सत्ता के उस चालाक व्यवहार को भी स्पष्ट किया है जिसके तहत वह अंगरेजी की जगह सीधे अनुवाद की हिन्दी स्थापित करना चाहती है। रघुवीर सहाय इसका

इसका विरोध करते हैं। वे ऐसे हिन्दी के पक्षधर जो लोकसभा से उत्पन्न हो और विषयवस्तु के अनुसार स्वतः स्फूर्त हो। हिन्दी को महज अनुवाद की भाषा के रूप में ढालते जाने का अर्थ यह होगा कि वह भी जनता के जीवन यथार्थ को व्यक्त करने में उतनी ही अक्षम होगी जितनी अंगरेजी। इसी कारण कवि कह उठा है-

"देखो शाम घर जाते बाप के कंधे पर
बच्चे की ऊब देखो
उसको तुम्हारी अंगरेजी कह नहीं सकती
और मेरी हिन्दी
कह नहीं पाएगी
अगले साल।"[22]

रघुवीर सहाय की इस संग्रह की कविताओं में सम्मूर्तित इस शोषित आम आदमी का यथार्थ साठोत्तरी दौर की कविताओं का मूल कथ्य है। इस शोषित आम आदमी को रघुवीर सहाय ने अपनी कविताओं में यातना के संदर्भों से कभी छूटने की पहल करते, कभी असहाय होते, कभी दहशत और आतंक के बीच मजबूरी में मुस्कराते, कभी यातनामय परिस्थितियों के बीच घिरकर और जीने से इन्कार करते हुए दिखलाकर आज के समय के उस भयानक मनुष्य विरोधी यथार्थ का स्वरूप स्पष्ट किया है जिसमें हम सबको जीना पड़ रहा है।

साठोत्तरी दौर में रघुवीर सहाय के इस संग्रह में यह भयानक मनुष्यविरोधी यथार्थ और भी जटिलता तथा आत्यंतिकता के साथ अभिव्यक्त हुआ है। इसमें अहिस्ता अहिस्ता फासिस्ट प्रवृत्तियाँ अख्तियार करते हुए बुर्जुआ लोकतंत्र के भीतर आतंक और दहशत के बल पर टिकी हुई व्यवस्था में एक स्वाधीन मनुष्य के रूप में जीने की स्थितियों के खत्म होते चले जाने का अकेलापन है। इन कविताओं की पृष्ठभूमि में यह अकेलापन इतना महत्वपूर्ण है कि कवि ने "हँसो हँसो जल्दी हँसो" संग्रह का समर्पण ही इस "अकेलेपन" को किया है -

"अपने उस अकेलेपन को
जो भय और साहस के बीच
कभी कभी
वहां मिला करता है जहां
कोई जीवित मित्र आ नहीं पाता
सिर्फ उनकी याद आ सकती है
जो ठीक उसी जगह मारे गए थे।"[23]

आतंकित कर देनेवाली इन भयावह स्थितियों के बीच रघुवीर सहाय नकारात्मक नैराश्य के शिकार नहीं होते। वे इन स्थितियों को खत्म करने के लिए समान धर्मियों की तलाश करते हैं, "आनेवाला खतरा" शीर्षक कविता में वे दहशत और आतंक के इस माहौल में इसका वास्तविक विरोध करनेवाली समानधर्मी की खोज के लिए व्यग्र है -

"खतरा होगा खतरे की घंटी होगी
और उसे बादशाह बजाएगा-रमेश।"[24]

रघुवीर सहाय की मानवीय करूणा की प्रक्रिया और उसका स्वरूप इससे मिलता जुलता है। उनकी कविताओं में यह मानवीय करूणा स्त्रियों और बच्चों की यातनामय जिंदगी की अभिव्यक्ति द्वारा सर्वाधिक व्यक्त हुई है।

इस अर्धसामंती, अर्धपूंजीवादी समाज में शोषण का सर्वाधिक आखेट स्त्रियों को अपनी कविता में लाते हुए रघुवीर सहाय आत्मदया अथवा वृथा भावुकता में नहीं फँसते बल्कि जिन सामाजिक स्थितियों के बीच यह अत्याचार घटित हो रहा है उन स्थितियों को समझने और बदलने की ओर प्रेरित करते हैं -

"कई कोठरियाँ थी कतार में
उनमें से किसी में एक औरत ले जाई गई
थोडी देर बाद उसका रोना सुनाई दिया

उसी रोने से हमें जाननी थी एक पूरी कथा
उसके बचपन से जवानी तक की कथा।"[25]

इस संग्रह की कविताओं में पुरूषप्रधान अर्धयामंती और अर्धपूंजीवादी समाज के अंतर्गत स्त्रियों का अकेलापन "अकेली औरत" उनकी नगण्यता "किले में औरत" उनके एकांत भय "उन्होंने कहा यह एक चाल है", "भय" को भी मूर्त करने की पहल की गई है।

"हँसो हँसो जल्दी हँसो" की कविताओं में यह भयद आशंका यथार्थ के और भी जटिल होने के कारण निकट का सत्य बन जाती है। कवि कहता है -

"मैंने देखा मेरे एक बड़ा लड़का था
परदेश में था वह
जिस दिन उसे आना था नहीं आया
फिर सहसा जाना कि वह कभी था ही नहीं।"[26]

इसके अलावा वर्तमान व्यवस्था में गरीबी में पलते हुए बच्चों की असुरक्षित जिंदगी "आमार सोनार दिल्ली" व्यवहार द्वारा उनके इस्तेमाल "फूल माला हाथों में" उनकी निराशाजन्य ऊब "दर्द" तथा एक बार फिर उनके डरावने भविष्य "जीने का खेल" से इस संग्रह की कविताओं में साक्षात्कार किया गया है जो एक व्यापक मानवीय करूणा का संसार रचते हैं।

इन कविताओं से थोडा हटकर कुछ भिन्न मिजाज की कविताएँ भी इस संग्रह में हैं। व्यंग्य तो अलग-अलग कविताओं में है ही; व्यंग्य मिश्रित हास्य भी कुछ कविताएँ इस संग्रह में मिल जाती हैं। जैसे तनाव भरे प्रदूषित वातावरण में आप एक सुगंधित फूल उठाकर सूंघ लें। हालांकि इन कविताओं का आग्रह भी यथार्थ की समग्र अभिव्यक्ति ही है -

"चंद्रकांत बावन में प्रेम में डूबा था
सत्तावन में चुनाव उसको अजूबा था
बासठ में चिंतित उपदेश से ऊबा था
सरसठ में लोहिया था और···और क्यूबा था
फिर जब बहत्तर में वोट पड़ा तो यह मुल्क नहीं था
हर जगह एक सूबेदार था, हर जगह सूबा था
अब बचा महबूबा पर महबूबा था कैसे लिखूं।"[27]

इस संग्रह के माध्यम से कवि रघुवीर सहाय कहते हैं - हिन्दुस्तान में घट रहे वर्तमान आत्यंतिक अत्याचारों के पीछे पूंजीवाद और सामंतवाद का सम्मिलित अश्लील चेहरा है। रघुवीर सहाय अपने कवि कर्म से इस चेहरे पर प्रहार करते हैं।

इस प्रकार इस संग्रह में विकृतियों की भरमार दिखाई देती है।

निष्कर्ष

रघुवीर सहाय एक नवरूमानी कवि है। उनका जीवन भी सामान्य रहा है - फिर भी वे निम्न-मध्य वर्ग के प्रतिनिधि कवि सिद्ध हुए हैं। उन्होंने सत्य और यथार्थ को अपनाया है। उनकी कविता का स्वर विराट चेतना से अनुप्रणित है, उन्हें साधारण प्रतिभा के धनी-साहित्यकार माना जाता है। उनकी "सीढ़ियों पर धूप में" से लेकर "हँसो हँसो जल्दी हँसो" कविता पर वर्तमान युग की भ्रष्ट शासन व्यवस्थाओं ने मानव को भ्रष्ट चित्रित किया है। रघुवीर सहाय की कविताएँ इस संकटग्रस्त पूंजीवाद को अंतिम रूप से दफन कर देने के लिए विरोध में उठे हुए हाथ की तरह हैं। कवि के लिए यह आवश्यक है कि मुक्ति के लिए प्रयत्नशील भारतीय जनता के सामूहिक संघर्षों के और भी मोर्चों को अपनी कविता की दुनिया में लाकर उसे विस्तृत करने की प्रक्रिया में तीव्रता लाए। पूंजीवाद जो आज धरती पर "मानवता" के विरूद्ध अपराधी" घोषित शब्दकोश का सबसे घृणास्पद शब्द बन

गया है, इसे शोषित लोग अपना दुनिया और अपने शब्दकोश से निकाल बाहर करना चाहते हैं। इन शोषित संघर्षकारी जनों के लिए रघुवीर सहाय का कवि संघर्ष यात्रा का अमूल्य पाथेय है। अतः रघुवीरजी का जीवन तथा उनके व्यक्तित्व से परिपूर्ण यह अध्याय उनकी कृतियों की एक अलग ही पहचान कराने का मैंने प्रयास किया है।

संदर्भ-सूची

1· दूसरा सप्तक - अज्ञेय, 3620/21, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-6, द्वि·संस्क· 1970, पृ·137

2· आधुनिक कविता की प्रवृत्तियाँ - डॉ·प्रेमप्रकाश गौतम, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा, प्र·सं·1972, पृ·138

3· हँसो हँसो जल्दी हँसो - रघुवीर सहाय, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नयी दिल्ली-110 002, द्वि·सं·1976, पृ·6

4· साठोत्तरी हिन्दी कविता : परिवर्तित दिशाएँ - विजयकुमार, 4175/21 दयानंद मार्ग, दरियागंज, नयी दिल्ली-110 002, प्र·सं·1986, पृ·192

5· आत्महत्या के विरुद्ध - (वक्तव्य - अज्ञेय)

6· दूसरा सप्तक - अज्ञेय, 3620/21, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-6, द्वि·सं· 1970, पृ·19

7· हिन्दी के प्रमुख कवि : रचना एवं शिल्प - डॉ·अरविन्द पांडेय, अनुभव प्रकाशन, श्रीनगर-कानपुर - 1, पृ·203

8· सीढ़ियों पर धूप में - रघुवीर सहाय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी, प्र·सं·1960, पृ·85

9· वही, पृ·86

10· वही, पृ·151

11· वही, पृ·130

12· वही, पृ·87

13· वही, पृ·88

14· वही, पृ·101

15· वही, पृ·165

16· वही, पृ·147

17· आत्महत्या के विरूद्ध - रघुवीर सहाय, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110 002, पृ·27

18· वही, पृ·22

19· वही, पृ·88

20· वही, पृ·29

21· वही, पृ·87

22· हँसो हँसो जल्दी हँसो - रघुवीर सहाय, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नयी दिल्ली - 110 002, दि·सं·1976, पृ·45

23· वही, पृ·

24· वही, पृ·10

25· वही, पृ·12

26· वही, पृ·46

27· वही, पृ·56